[2021] 2 उम. नि. प. 338

भारत संघ

बनाम

के. ए. नज़ीब

[2021 की दांडिक अपील सं. 98]

1 फरवरी, 2021

न्यायमूर्ति एन. वी. रमना, न्यायमूर्ति सूर्य कांत और न्यायमूर्ति अनिरुद्ध बोस

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 437 और 439 [सपठित संविधान, 1950 का अनुच्छेद 21] – जमानत मंजूर किया जाना – अभियुक्त के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, विस्फोटक पदार्थ अधिनियम और विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम की विभिन्न धाराओं के अधीन गंभीर आरोप विरचित किया जाना – अभियुक्त द्वारा पांच वर्ष से अधिक की अवधि न्यायिक अभिरक्षा में व्यतीत किया जाना – जहां अभियुक्त द्वारा पहले ही एक लंबी अवधि न्यायिक अभिरक्षा में व्यतीत कर ली गई हो और निकट भविष्य में विचारण आरंभ या पूर्ण होने की संभावना न हो, वहां न्याय तक पहुंच और त्वरित विचारण के अभियुक्त के अधिकार पर विचार करते हुए उसे जमानत पर छोड़ना उचित होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि प्रोफेसर पी. जे. जोसेफ ने न्यूमेन महाविद्यालय, थोडुपुझा में बी. कॉम. परीक्षा के द्वितीय सेमेस्टर के लिए मलियालम प्रश्न-पत्र बनाते समय एक ऐसा प्रश्न सम्मिलित किया था जिसे समाज के कतिपय वर्गों द्वारा एक विशिष्ट धर्म के विरुद्ध आक्षेपणीय समझा गया था । प्रत्यर्थी ने पापुलर फ्रंट ऑफ इंडिया (पीएफआई) के अन्य सदस्यों के साथ मिलकर ईशनिंदा के इस तात्पर्यित कृत्य का प्रतिशोध लेने का विनिश्चय किया । तारीख 4 जुलाई, 2010 को लगभग 8.00 बजे पूर्वाह्न में लोगों के एक समूह ने सामान्य उद्देश्य के साथ पीड़ित-प्रोफेसर पर उस समय आक्रमण किया जब वह स्थानीय

चर्च में रविवार की सामूहिक प्रार्थना में सम्मिलित होने के पश्चात् अपनी माता और बहिन के साथ घर वापस आ रहा था । आक्रमण के दौरान पीएफआई के सदस्यों ने बलपूर्वक पीड़ित की कार को बीच में रोका, उसे अवरुद्ध किया और छुरे, चाकुओं और एक छोटी कुल्हाड़ी से उसकी दाईं हथेली को काट दिया । परिणामस्वरूप पीड़ित-प्रोफेसर की पत्नी द्वारा आक्रमणकारियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 143, 147, 148, 120ख, 341, 427, 323, 324, 326, 506(ज), 201, 202, 153क, 212, 307, 149 और विस्फोटक पदार्थ अधिनियम, 1908 की धारा 3 के अधीन एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई । अन्वेषण के दौरान यह उजागर हुआ कि आक्रमण एक बड़े षड्यंत्र का भाग था जिसमें अति सावधानीपूर्वक पूर्व-योजना, पूर्व में किए गए अनेक असफल प्रयत्न और खतरनाक आयुधों का प्रयोग अंतर्वलित था । तद्नुसार, पुलिस द्वारा वर्तमान प्रत्यर्थी सहित कई दर्जन व्यक्तियों को दोषारोपित किया गया । अभिकथित रूप से प्रत्यर्थी एक मुख्य षड्यंत्रकारी था और इस प्रकार उसके विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 153क, 201, 202, 212 में अंतर्विष्ट उपबंधों के साथ-साथ विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम की धारा 16, 18, 18ख, 19 और 20 का भी अवलंब लिया गया । तथापि, उसे ढूंढ़ा नहीं जाने के कारण उसे फरार घोषित किया गया और उसके विचारण को उसके शेष सह-षड्यंत्रकारियों से अलग किया गया । प्रत्यर्थी के सह-अभियुक्तों का विचारण किया गया और विशेष न्यायालय, केंद्रीय अन्वेषण अभिकरण के तारीख 30 अप्रैल, 2015 के आदेश द्वारा उनमें से अधिकांश दोषी पाए गए और उन्हें दो से आठ वर्ष तक के कठोर कारावास का सामूहिक दंडादेश दिया गया । प्रत्यर्थी को तारीख 10 अप्रैल, 2015 को गिरफ्तार किया जा सका और राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण द्वारा उसके विरुद्ध पुन: एक आरोप पत्र फाइल किया गया जिसके अनुसरण में प्रत्यर्थी अब विचारण का सामना कर रहा है । प्रत्यर्थी ने अपराध में उसकी सीमित भूमिका के आधार पर नरमी बरतने और अन्य सह-अभियुक्तों के साथ समानता का दावा करते हुए, जिन्हें जमानत पर छोड़ दिया गया था या दोषमुक्त कर दिया गया था, वर्ष 2015 और 2019 के बीच विशेष न्यायालय और उच्च न्यायालय में जमानत के लिए कुल मिलाकर छह बार समावेदन किया । न्यायालयों का यह मत था कि विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम की

धारा 43घ(5) के अधीन जमानत प्रदान करने के विरुद्ध वर्जन लागू होता है । प्रत्यर्थी ने जमानत से इनकार करने वाले विशेष न्यायालय के आदेश को प्रश्नगत करते हुए तीसरी बार पुन: मई, 2019 में उच्च न्यायालय में समावेदन किया । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा प्रत्यर्थी को यह उल्लेख करते हुए जमानत पर छोड़ दिया कि वह यद्यपि चार वर्षों से अभिरक्षा में है और विचारण अभी आरंभ होना है । उच्च न्यायालय ने राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण अधिनियम, 2008 के अधीन त्वरित विचारण करने के आदेश पर बल देते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि विचारणाधीन प्रत्यर्थी को अधिक लंबी अवधि तक अभिरक्षा में नहीं रखा जा सकता है जब निकट भविष्य में विचारण आरंभ होने की संभावना नहीं है क्योंकि ऐसा करने से उस पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा और पीड़ा कारित होगी । उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध भारत संघ द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह एक वास्तविकता है कि उच्च न्यायालय ने प्रस्तुत मामले में प्रत्यर्थी के दोषी होने या न होने की संभावना या क्या विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम की धारा 43घ(5) की कठोरता उसके लिए असंगत है या नहीं, का अवधारण नहीं किया था । इसके बजाय यह प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने जमानत मंजूर करने के लिए अपनी शक्ति का प्रयोग प्रत्यर्थी के कैद में लंबी अवधि तक रहने और निकट भविष्य में किसी समय विचारण पूर्ण होने की असंभावना के कारण किया था । उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों का पता, निस्संदेह विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम की धारा 43-घ(5) द्वारा सृजित कानूनी रोक पर ध्यान दिए बिना, स्पष्ट रूप से हमारे संविधान के अनुच्छेद 21 की मूल भावना से चलता है । इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम की धारा 43घ(5) जैसे कानूनी निर्बंधनों की मौजूदगी स्वयमेव संविधान के भाग 3 के अतिक्रमण के आधार पर जमानत मंजूर करने के सांविधानिक न्यायालयों के सामर्थ्य से वंचित नहीं करती है । वास्तव में, किसी कानून के अधीन निर्बंधनों तथा सांविधानिक अधिकारिता के अधीन प्रयोग किए जाने योग्य शक्तियां दोनों को भली-भांति सामंजस्यपूर्ण

बनाया जा सकता है । जबकि कार्यवाहियों के प्रारंभ होने पर न्यायालयों से जमानत मंजूर करने के विरुद्ध विधायी नीति का मूल्यांकन करने की प्रत्याशा की जाती है किंतु ऐसे उपबंधों की कठोरता वहां नरम हो जाएगी जहां एक युक्तियुक्त समय के भीतर विचारण पूर्ण होने की संभावना न हो और पहले ही भुगत ली गई कैद की अवधि विहित दंडादेश के सारभूत भाग से अधिक हो गई हो । ऐसा दृष्टिकोण विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम की धारा 43घ(5) जैसे उपबंधों को जमानत से इनकार करने के लिए या त्वरित विचारण के सांविधानिक अधिकार का अंधाधुंध भंग करने के लिए एकमात्र माप के रूप में प्रयोग किए जाने की संभाव्यता के विरुद्ध रक्षोपाय होगा । इस न्यायालय को इस तथ्य का भान है कि प्रत्यर्थी के विरुद्ध लगाए गए आरोप गंभीर हैं और सामाजिक समरसता के लिए एक गंभीर खतरा है । यदि यह मामला आंरभिक प्रक्रम का रहा होता, तो यह न्यायालय प्रत्यर्थी की प्रार्थना को एकदम अस्वीकार कर देता । तथापि, उसके द्वारा अभिरक्षा में व्यतीत की गई अवधि की मात्रा और विचारण के शीघ्र ही किसी समय पूर्ण होने की असंभावना को ध्यान में रखते हुए यह प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय के पास जमानत मंजूर करने के सिवाय कोई अन्य विकल्प नहीं बचा था । अपनी पसंद का साक्ष्य प्रस्तुत करके और किसी संदेह के परे आरोपों को सिद्ध करने के अपीलार्थी के अधिकार तथा साथ-ही-साथ हमारे संविधान के भाग 3 के अधीन प्रत्याभूत प्रत्यर्थी के अधिकारों की भली-भांति संरक्षा करने के बीच एक संतुलन बनाने का प्रयत्न किया गया है । (पैरा 11, 18, 19 और 20)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2019]	(2019) 5 एस. सी. सी. 1 : **राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण** बनाम **ज़हूर अहमद शाह वाटली** ;	7, 17
[2017]	(2017) 2 एस. सी. सी. 178 : **बिहार राज्य** बनाम **राजबल्लव प्रसाद** ;	10
[2017]	(2017) 5 एस. सी. सी. 702 : **हुसैन** बनाम **भारत संघ** ;	8

[2017] (2017) 2 एस. सी. सी. 731 :
उमरमिया उर्फ **मामूमिया** बनाम **गुजरात राज्य** ; 13

[2015] 2015 की विशेष इजाजत याचिका (क्रि.) सं. 7947, जिसमें तारीख 3.1.2017 को आदेश किया गया :
सागर तात्याराम गोरखे बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ; 14

[2015] 2015 की विशेष इजाजत याचिका (क्रि.) सं. 6888, जिसमें तारीख 4.5.2016 को आदेश किया गया :
अंजेला हरीश सोनताक्के बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ; 14

[2005] (2005) 11 एस. सी. सी. 569 :
बब्बा उर्फ **शंकर रघुमन रोहिदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ; 13

[2001] (2001) 6 एस. सी. सी. 338 :
पूरन बनाम **रामबिलास** ; 9

[1999] (1999) 9 एस. सी. सी. 252 :
परमजीत सिंह बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)** ; 13

[1996] (1996) 2 एस. सी. सी. 616 :
शाहीन वेलफेयर एसोसिएशन बनाम **भारत संघ** ; 8, 12

[1994] (1994) 6 एस. सी. सी. 731 :
विचारणाधीन कैदियों का प्रतिनिधित्व करने के लिए उच्चतम न्यायालय विधिक सहायता समिति बनाम **भारत संघ** ; 16

[1978] (1978) 1 एस. सी. सी. 118 :
गुरचरण सिंह बनाम **राज्य (दिल्ली प्रशासन)** । 9

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2021 की दांडिक अपील सं. 98.

2019 की दांडिक अपील सं. 659 में 2019 के दांडिक प्रकीर्ण आवेदन सं. 01 में केरल उच्च न्यायालय के तारीख 23 जुलाई, 2019 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री बी. वी. बलराम दास

प्रत्यर्थी की ओर से श्री रमेश बाबू एम. आर.

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सूर्य कांत ने दिया ।

न्या. कांत – इजाजत दी गई ।

2. यह अपील भारत संघ द्वारा राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण के माध्यम से केरल उच्च न्यायालय, ऐर्नाकुलम के तारीख 23 जुलाई, 2019 के उस आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है, जिसके द्वारा प्रत्यर्थी को भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 143, 147, 148, 120ख, 341, 427, 323, 324, 326, 506(ज), 201, 202, 153क, 212, 307, 149, विस्फोटक पदार्थ अधिनियम, 1908 की धारा 3 और विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1967 की धारा 16, 18, 18ख, 19 और 20 के अधीन अपराध के लिए जमानत प्रदान की गई थी ।

तथ्य

3. अभियोजन का पक्षकथन संक्षेप में यह है कि प्रोफेसर पी. जे. जोसेफ ने न्यूमेन महाविद्यालय, थोडुपुझा में बी. कॉम. परीक्षा के द्वितीय सेमेस्टर के लिए मलियालम प्रश्न-पत्र बनाते समय एक ऐसा प्रश्न सम्मिलित किया था जिसे समाज के कतिपय वर्गों द्वारा एक विशिष्ट धर्म के विरुद्ध आक्षेपणीय समझा गया था । प्रत्यर्थी ने पापुलर फ्रंट ऑफ इंडिया (पीएफआई) के अन्य सदस्यों के साथ मिलकर ईशनिंदा के इस तात्पर्यित कृत्य का प्रतिशोध लेने का विनिश्चय किया । तारीख 4 जुलाई, 2010 को लगभग 8.00 बजे पूर्वाह्न में लोगों के एक समूह ने सामान्य उद्देश्य के साथ पीड़ित-प्रोफेसर पर उस समय आक्रमण किया जब वह स्थानीय चर्च में रविवार की सामूहिक प्रार्थना में सम्मिलित होने के पश्चात् अपनी माता और बहिन के साथ घर वापस आ रहा था । आक्रमण के दौरान पीएफआई के सदस्यों ने बलपूर्वक पीड़ित की कार को बीच में रोका, उसे अवरुद्ध किया और छुरे, चाकुओं और एक छोटी कुल्हाड़ी से उसकी दाईं हथेली को काट दिया । दर्शकों पर उनके मस्तिष्क में आतंक और भय पैदा करने के लिए और पीड़ित की सहायता के लिए आने से उन्हें रोकने के लिए देशी बम भी फेंके गए ।

परिणामस्वरूप पीड़ित-प्रोफेसर की पत्नी द्वारा आक्रमणकारियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 143, 147, 148, 120ख, 341, 427, 323, 324, 326, 506(ज), 201, 202, 153क, 212, 307, 149 और विस्फोटक पदार्थ अधिनियम, 1908 की धारा 3 के अधीन एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई ।

4. अन्वेषण के दौरान यह उजागर हुआ कि आक्रमण एक बड़े षड्यंत्र का भाग था जिसमें अति सावधानीपूर्वक पूर्व-योजना, पूर्व में किए गए अनेक असफल प्रयत्न और खतरनाक आयुधों का प्रयोग अंतर्वलित था । तद्नुसार, पुलिस द्वारा वर्तमान प्रत्यर्थी सहित कई दर्जन व्यक्तियों को दोषारोपित किया गया । यह अभिकथन किया गया कि प्रत्यर्थी एक मुख्य षड्यंत्रकारी था और इस प्रकार उसके विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 153क, 201, 202, 212 में अंतर्विष्ट उपबंधों के साथ-साथ विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम की धारा 16, 18, 18ख, 19 और 20 का भी अवलंब लिया गया । तथापि, उसे ढूंढ़ा नहीं जाने के कारण उसे फरार घोषित किया गया और उसके विचारण को उसके शेष सह-षड्यंत्रकारियों से अलग किया गया । प्रत्यर्थी के सह-अभियुक्तों का विचारण किया गया और विशेष न्यायालय, केंद्रीय अन्वेषण अभिकरण के तारीख 30 अप्रैल, 2015 के आदेश द्वारा उनमें से अधिकांश दोषी पाए गए और उन्हें दो से आठ वर्ष तक के कठोर कारावास का सामूहिक दंडादेश दिया गया ।

5. प्रत्यर्थी को तारीख 10 अप्रैल, 2015 को गिरफ्तार किया जा सका और राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण द्वारा उसके विरुद्ध पुन: एक आरोप पत्र फाइल किया गया जिसके अनुसरण में प्रत्यर्थी अब विचारण का सामना कर रहा है । प्रत्यर्थी ने अपराध में उसकी सीमित भूमिका के आधार पर नरमी बरतने और अन्य सह-अभियुक्तों के साथ समानता का दावा करते हुए, जिन्हें जमानत पर छोड़ दिया गया था या दोषमुक्त कर दिया गया था, वर्ष 2015 और 2019 के बीच विशेष न्यायालय और उच्च न्यायालय में जमानत के लिए कुल मिलाकर छह बार समावेदन किया । आक्षेपित आदेश को छोड़कर, प्रत्यर्थी को जमानत के लिए यह मत व्यक्त करते हुए इनकार कर दिया गया कि प्रथमदृष्ट्या उसे

अपराध की पूर्व जानकारी थी, उसने आक्रमण करने में सहायता की थी और सुकर बनाया था, यान और सिम कार्डों की व्यवस्था की थी, स्वयं घटनास्थल के निकट प्रतीक्षा की थी, अपराधियों को परिवहन किया गया था, शरण दी गई थी और उसके पश्चात् उन्हें चिकित्सीय सहायता दी गई थी । अत: न्यायालयों का यह मत था कि विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम की धारा 43घ(5) के अधीन जमानत प्रदान करने के विरुद्ध वर्जन लागू होता है ।

6. प्रत्यर्थी ने जमानत से इनकार करने वाले विशेष न्यायालय के आदेश को प्रश्नगत करते हुए तीसरी बार पुन: मई, 2019 में उच्च न्यायालय में समावेदन किया । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा प्रत्यर्थी को यह उल्लेख करते हुए जमानत पर छोड़ दिया कि वह यद्यपि चार वर्षों से अभिरक्षा में है और विचारण अभी आरंभ होना है । उच्च न्यायालय ने राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण अधिनियम, 2008 के अधीन त्वरित विचारण के आदेश पर बल देते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि विचारणाधीन प्रत्यर्थी को अधिक लंबी अवधि तक अभिरक्षा में नहीं रखा जा सकता है जबकि निकट भविष्य में विचारण आरंभ होने की संभावना नहीं है क्योंकि ऐसा करने से उस पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा और पीड़ा कारित होगी । तथापि, पूर्वोल्लिखित जमानत आदेश के प्रवर्तन पर इस न्यायालय द्वारा रोक लगा दी गई थी । परिणामस्वरूप, प्रत्यर्थी ने लगभग पांच वर्ष और पांच माह न्यायिक अभिरक्षा में व्यतीत किए हैं ।

दलीलें

7. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् अपर महासालिसिटर ने यह दलील दी कि उच्च न्यायालय ने विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम की धारा 43घ(5) की कानूनी कठोरता पर विचार किए बिना जमानत मंजूर करके गलती की थी । **राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण** बनाम **ज़हूर अहमद शाह वाटली**[1] वाले मामले में के निर्णय का अवलंब लेने के उपरांत यह रेखांकित किया कि विशेष अधिनियमिति के अधीन जमानत की कार्यवाहियां सुभिन्न होती हैं और न्यायालय वहां जमानत से इनकार

---

[1] (2019) 5 एस. सी. सी. 1.

करने के लिए कर्तव्याबद्ध हैं जहां संदिग्ध व्यक्ति पर प्रथमदृष्ट्या दोषी होने का विश्वास हो । यह भी दलील दी गई कि विशेष न्यायालय और उच्च न्यायालय के समक्ष कई सारे पूर्ववर्ती दौर में यह विश्वास करने के लिए पर्याप्त कारण प्रकट हुए हैं कि प्रत्यर्थी प्रथमदृष्ट्या उसके विरुद्ध किए गए अभ्यारोपणों का दोषी है । इस तथ्य को, कि प्रत्यर्थी वर्षों तक फरार रहा था, इस विधिसम्मत आशंका के रूप में सहायता के लिए प्रयोग किया गया कि यदि उसे उन्मुक्त किया जाता है तो वह वापस नहीं आएगा । विचारण के शीघ्र पूर्ण होने के संबंध में, राष्ट्रीय अन्वेषण अधिकरण ने एक अतिरिक्त शपथपत्र फाइल करके 276 साक्षियों की परीक्षा करने का सुझाव दिया और साथ-ही-साथ दिनों-दिन के आधार पर विचारण करने और लगभग एक वर्ष के भीतर इसके पूर्ण हो जाने की प्रत्याशा की ।

8. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह रेखांकित किया कि कई सारे सह-अभियुक्तों को दोषमुक्त किया जा चुका है और यद्यपि कुछेक को दोषसिद्ध भी किया गया है, किंतु उन सिद्धदोष व्यक्तियों को भी 8 वर्ष से अधिक का दंडादेश नहीं दिया गया है । इस बात पर विचार करते हुए कि प्रत्यर्थी ने कैसे विचारण आरंभ हुए बिना ही पहले ही लगभग साढ़े पांच वर्ष की कैद भुगत ली है, इस बात से किसी न्यायिक प्राधिकारी द्वारा दोषिता के किसी न्यायनिर्णयन के बिना उसके द्वारा अधिकांश दंडादेश भुगत लेने से उसकी सांविधानिक स्वाधीनता और अधिकारों का अतिक्रमण होता है । उन्होंने यह आग्रह किया कि जब एक बार उच्च न्यायालय ने जमानत मंजूर करने के लिए विवेकाधिकार का प्रयोग किया था, तो विरल परिस्थितियों के सिवाय उसमें हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए । **शाहीन वेलफेयर एसोसिएशन** बनाम **भारत संघ**[1] और **हुसैन** बनाम **भारत संघ**[2] वाले मामलों का अवलंब लेते हुए यह दलील दी गई कि ऐसे दीर्घकाल तक कैद में रहने से त्वरित विचारण और न्याय तक पहुंच के प्रत्यर्थी के अधिकार का अतिक्रमण हुआ है, ऐसे मामले में सांविधानिक

---

[1] (1996) 2 एस. सी. सी. 616.

[2] (2017) 5 एस. सी. सी. 702.

न्यायालय विशेष अधिनियमितियों के अधीन विनिर्दिष्ट परिसीमाओं पर विचार किए बिना जमानत मंजूर करने के लिए अपनी शक्तियों का प्रयोग कर सकते हैं ।

विश्लेषण

9. प्रारंभ में इस बात पर बल दिया जाना आवश्यक है कि जमानत के आवेदन पर विचार करते समय लागू किए जाने वाले मानदंडों के मुकाबले वे मानदंड स्पष्ट रूप से भिन्न हैं जो जमानत रद्द करने के लिए किसी याचिका का विनिश्चय करते समय लागू होते हैं । **पूरन** बनाम **रामबिलास**[1] वाले मामले में यह दोहराया गया था कि जमानत के लिए आवेदन का विनिश्चय करते समय कारणों को, यद्यपि साक्ष्य का गुणागुण के आधार पर मूल्यांकन किए बिना, अभिलिखित करना आवश्यक होगा । इसके विपरीत, **पूरन** (उपर्युक्त) वाले मामले में **गुरचरण सिंह** बनाम **राज्य (दिल्ली प्रशासन)**[2] वाले मामले को उद्धृत किया गया था, जिसमें इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था कि विचारण न्यायालय द्वारा एक बार मंजूर की गई जमानत उसी न्यायालय द्वारा केवल नई परिस्थितियां/साक्ष्य की दशा में रद्द की जा सकती है, ऐसा न होने पर अपीली अधिकारिता का प्रयोग करते हुए उच्चतर न्यायालय में समावेदन करना आवश्यक होगा ।

10. **बिहार राज्य** बनाम **राजबल्लव प्रसाद**[3] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह निर्णय दिया था कि जमानत के मामलों में वरिष्ठ न्यायालयों द्वारा प्रयोग किए गए विवेकाधिकार का, आपवादिक परिस्थितियों को छोड़कर, सम्मान किया जाना चाहिए । ऊपर उद्धृत विनिश्चय में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया था :–

> "14. हम प्रारंभ में यह मत व्यक्त कर सकते हैं कि हमें उन परिसीमाओं का भान है जो हमें निचले न्यायालय, और वह भी उच्च न्यायालय जैसे एक वरिष्ठ न्यायालय द्वारा, जमानत मंजूर

---

[1] (2001) 6 एस. सी. सी. 338.

[2] (1978) 1 एस. सी. सी. 118.

[3] (2017) 2 एस. सी. सी. 178.

करने के विरुद्ध किसी अभिवाक् को ग्रहण करते समय आबद्ध करती हैं । यह प्रत्याशा की जाती है कि उच्च न्यायालय द्वारा सुसंगत बातों के आधार पर जब एक बार जमानत मंजूर कर दी जाती है, तो यह न्यायालय प्रसामान्यत: ऐसे विवेकाधिकार में तब तक हस्तक्षेप नहीं करेगा जब तक यह नहीं पाया जाता है कि स्वयं विवेकाधिकार का प्रयोग बाह्य बातों के आधार पर किया गया था और/या उन सुसंगत कारकों की उपेक्षा या अवहेलना की गई थी जिन पर ऐसे विवेकाधिकार का प्रयोग करते समय विचार किया जाना आवश्यक था । ..... जमानत मंजूर करने के विवेकाधिकार में हस्तक्षेप करने के लिए जो परिस्थितियां आवश्यक हैं वे अत्यंत सटीक और प्रचुर होनी चाहिएं । इन तात्विक बातों का उल्लेख पूर्वोक्त निर्णयों में भी किया गया है अर्थात् क्या अभियुक्त अपने विचारण के लिए आसानी से उपलब्ध हो जाएगा और क्या उसके द्वारा साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ करके उसके पक्ष में मंजूर किए गए विवेकाधिकार का दुरुपयोग करने की संभावना है । ....."

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

11. यह एक वास्तविकता है कि उच्च न्यायालय ने प्रस्तुत मामले में प्रत्यर्थी के दोषी होने या न होने की संभावना या क्या विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम की धारा 43घ(5) की कठोरता उसके लिए असंगत है या नहीं, का अवधारण नहीं किया था । इसके बजाय यह प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने जमानत मंजूर करने के लिए अपनी शक्ति का प्रयोग प्रत्यर्थी के कैद में लंबी अवधि तक रहने और निकट भविष्य में किसी समय विचारण पूर्ण होने की असंभावना के कारण किया था । उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों का पता, निस्संदेह विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम की धारा 43-घ(5) द्वारा सृजित कानूनी रोक पर ध्यान दिए बिना, स्पष्ट रूप से हमारे संविधान के अनुच्छेद 21 की मूल भावना से चलता है ।

12. **शाहीन वेलफेयर एसोसिएशन** (उपर्युक्त) वाले मामले सहित इस न्यायालय के बहुत सारे विनिश्चयों से उच्च न्यायालय के इस मत का समर्थन होता है जिसमें यह अधिकथित किया गया है कि ऐसे मामलों के

निपटारे में अत्यधिक विलंब होने से संविधान के अनुच्छेद 21 का अवलंब लेना और परिणामत: विचारणाधीन अभियुक्त को जमानत पर छोड़ने की आवश्यकता न्यायोचित होगी । उद्धृत मामले से निम्नलिखित मताभिव्यक्तियों को कोट करना उपयोगी होगा :–

> "10. अपराध की प्रकृति तथा समाज और राष्ट्र की संरक्षा की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए, आतंकवाद और विध्वंसकारी क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम (टाडा) में जमानत मंजूर करने के लिए धारा 20(8) में कठोर उपबंध विहित किए गए हैं । जैसा कि **करतार सिंह** [(1994) 3 एस. सी. सी. 569 = 1994 एस. सी. सी. (क्रि.) 899] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया था, ऐसे कठोर उपबंधों को अपराध की प्रकृति को देखते हुए इस उपधारणा के आधार पर न्यायोचित कहा जा सकता है कि अभियुक्त का विचारण असम्यक् विलंब के बिना किया जाएगा । मामलों के निपटारे में अत्यधिक विलंब को कोई भी न्यायोचित नहीं ठहरा सकता है जब विचारणाधीन अभियुक्तों को मजबूरन कारागार में रहना पड़े, और इनसे वे संभाव्य स्थितियां उद्भूत होती हैं जिनमें अनुच्छेद 21 का अवलंब लेना न्यायोचित हो सकता है ।"
>
> (बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

13. आतंकवादी और विध्वंसकारी क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1987 या स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 जैसे विशेष विधानों के मामले में भी, जिनमें कहीं-न-कहीं जमानत मंजूर करने के लिए कठोर शर्तें लगाई गई हैं, इस न्यायालय ने **परमजीत सिंह** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)**[1], **बब्बा** उर्फ **शंकर रघुमन रोहिदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[2] और **उमरमिया** उर्फ **मामूमिया** बनाम **गुजरात राज्य**[3] वाले मामलों में अभियुक्तों को उस समय जमानत पर छोड़ दिया था जब वे विस्तृत

---

[1] (1999) 9 एस. सी. सी. 252.

[2] (2005) 11 एस. सी. सी. 569.

[3] (2017) 2 एस. सी. सी. 731.

कालावधि तक जेल में रहे थे और विचारण शीघ्र पूर्ण होने की कम संभावना थी । इस प्रकार, ऐसी विशेष अधिनियमितियों में जमानत के लिए कठोर शर्तों की सांविधानिकता को निर्दोष नागरिकों की संरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए त्वरित विचारणों की कसौटी पर न्यायोचित ठहराया गया है ।

14. हम **अंजेला हरीश सोनताक्के** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इसी प्रकार की स्थिति में अभियुक्तों को विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम के अधीन रिहा करने के लिए इस न्यायालय द्वारा पारित आदेशों को भी निर्दिष्ट कर सकते हैं । वह मामला भी विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम की धारा 10, 13, 17, 18, 18क, 18ख, 20, 21, 38, 39 और 40(2) के अधीन था । इस न्यायालय ने आरोपों की गंभीरता और अभिरक्षा में भुगत ली गई अवधि के बीच संतुलन बनाने के अपने भरसक प्रयास में और वह संभाव्य अवधि जिसमें विचारण के पूर्ण होने की प्रत्याशा की जा सकती थी, पांच वर्ष तक कैद में रहने और 200 से अधिक साक्षियों की परीक्षा किया जाना शेष रहने की बात पर विचार किया और इस प्रकार विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम की धारा 43घ(5) होते हुए भी अभियुक्तों को जमानत मंजूर की थी । इसी प्रकार, **सागर तात्याराम गोरखे** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[2] वाले मामले में विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम के अधीन अभियुक्त को छोड़ दिया गया था क्योंकि वह चार वर्षों से कारागार में था और अभी 147 से अधिक साक्षियों की परीक्षा नहीं की गई थी ।

15. प्रस्तुत मामले के तथ्य इन दोनों ऊपर उद्धृत दृष्टांतों से अधिक भयंकर हैं । प्रत्यर्थी न केवल पांच वर्षों से अधिक अवधि से कारागार में है, अपितु 276 साक्षियों की परीक्षा की जानी शेष है । यह भी कि अपीलार्थी-राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण को दो अवसर दिए गए थे,

---

[1] 2015 की विशेष इजाजत याचिका (क्रि.) सं. 6888, जिसमें तारीख 4.5.2016 को आदेश किया गया ।

[2] 2015 की विशेष इजाजत याचिका (क्रि.) सं. 7947, जिसमें तारीख 3.1.2017 को आदेश किया गया ।

जिसने साक्षियों की अपनी अंतहीन सूची को प्रदर्शित करने के लिए कोई अभिरुचि नहीं दिखाई । यह भी उल्लेखनीय है कि तेरह सह-अभियुक्त, जिन्हें दोषसिद्ध किया गया था, उनमें से किसी को भी आठ वर्ष से अधिक का कठोर कारावास नहीं दिया गया है । अत: विधिसम्मत रूप से यह प्रत्याशा की जा सकती है कि यदि प्रत्यर्थी दोषी पाया जाता है, तो उसे भी लगभग उतनी ही अवधि का दंडादेश दिया जाएगा । इस बात पर विचार करते हुए कि ऐसे कारावास का दो-तिहाई पहले ही पूर्ण हो चुका है, इसलिए यह प्रतीत होता है कि न्याय से फरार होने के अपने कृत्य के लिए प्रत्यर्थी पहले ही बहुत अधिक कीमत अदा कर चुका है ।

16. इस न्यायालय ने अनेक निर्णयों में यह स्पष्ट किया है कि संविधान के भाग 3 द्वारा प्रत्याभूत स्वाधीनता के संरक्षात्मक परिधि के अंतर्गत न केवल सम्यक् प्रक्रिया और ऋजुता अपितु न्याय तक पहुंच और त्वरित विचारण भी आता है । **विचारणाधीन कैदियों का प्रतिनिधित्व करने के लिए उच्चतम न्यायालय विधिक सहायता समिति** बनाम **भारत संघ**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि विचारणाधीन अभियुक्तों को विचारण के लंबित रहते हुए अनिश्चित अवधि तक निरुद्ध नहीं रखा जा सकता है । आदर्शत:, किसी भी व्यक्ति को अपने कृत्यों के प्रतिकूल परिणामों को तब तक भुगतना न पड़े जब तक कि एक निष्पक्ष निर्णायक के समक्ष वह कृत्य सिद्ध नहीं हो जाता है । तथापि, वास्तविक जीवन की व्यावहारिकताओं के कारण जहां एक प्रभावकारी विचारण सुनिश्चित करने और समाज के लिए जोखिम को कम करने के लिए यदि किसी संभाव्य अपराधी को विचारण के लंबित रहने के दौरान स्वतंत्र छोड़ना है, तो यह विनिश्चय करने का कार्य न्यायालयों का है कि क्या किसी ऐसे व्यक्ति को विचारण के लंबित रहने के दौरान छोड़ा जाना चाहिए या नहीं । जब एक बार यह स्पष्ट हो जाता है कि समय पर विचारण पूर्ण करना संभव नहीं होगा और अभियुक्त ने पर्याप्त समयावधि कैद में व्यतीत कर ली है, तो न्यायालय सामान्यतया उन्हें जमानत पर छोड़ने के लिए आबद्ध होंगे ।

---

[1] (1994) 6 एस. सी. सी. 731.

17. जहां तक विद्वान् अपर महासालिसिटर द्वारा उद्धृत **राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण** बनाम **ज़हूर अहमद शाह वाटली** (उपर्युक्त) वाले मामले में के निर्णय का संबंध है, हम यह पाते हैं कि उस मामले की तथ्यात्मक पृष्ठभूमि पूर्णतया भिन्न थी । उस मामले में, उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि का प्रथमदृष्ट्या मामला होने के कारण विशेष न्यायालय के निष्कर्ष को उलटने के लिए संपूर्ण साक्ष्य का मूल्यांकन किया था और जमानत नामंजूर कर दी थी । उच्च न्यायालय ने वास्तव में एक लघु-विचारण किया था और उन कतिपय साक्ष्यों की ग्राह्यता का अवधारण किया था, जो किसी जमानत याचिका की सीमित व्याप्ति से बाहर था । यह न केवल धारा 43घ(5) के अधीन प्रथमदृष्ट्या निर्धारण की कानूनी आज्ञा से परे था अपितु यह समयपूर्व भी था और इससे संभवत: स्वयं विचारण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा होगा । इन्हीं परिस्थितियों के कारण इस न्यायालय ने उसमें हस्तक्षेप किया और जमानत को रद्द कर दिया ।

18. इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम की धारा 43घ(5) जैसे कानूनी निर्बंधनों की मौजूदगी स्वयमेव संविधान के भाग 3 के अतिक्रमण के आधार पर जमानत मंजूर करने के सांविधानिक न्यायालयों के सामर्थ्य से वंचित नहीं करती है । वास्तव में, किसी कानून के अधीन निर्बंधनों तथा सांविधानिक अधिकारिता के अधीन प्रयोग किए जाने योग्य शक्तियां दोनों को भली-भांति सामंजस्यपूर्ण बनाया जा सकता है । जबकि कार्यवाहियों के प्रारंभ होने पर न्यायालयों से जमानत मंजूर करने के विरुद्ध विधायी नीति का मूल्यांकन करने की प्रत्याशा की जाती है किंतु ऐसे उपबंधों की कठोरता वहां नरम हो जाएगी जहां एक युक्तियुक्त समय के भी विचारण पूर्ण होने की संभावना न हो और पहले ही भुगत ली गई कैद की अवधि विहित दंडादेश के सारभूत भाग से अधिक हो गई हो । ऐसा दृष्टिकोण विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम की धारा 43घ(5) जैसे उपबंधों को जमानत से इनकार करने के लिए या त्वरित विचारण के सांविधानिक अधिकार का अंधाधुंध भंग करने के लिए एकमात्र माप के रूप में प्रयोग किए जाने की संभाव्यता के विरुद्ध रक्षोपाय होगा ।

19. प्रस्तुत मामले पर आते हैं, हमें इस तथ्य का भान है कि प्रत्यर्थी के विरुद्ध लगाए गए आरोप गंभीर हैं और सामाजिक समरसता के लिए एक गंभीर खतरा है । यदि यह मामला आंरभिक प्रक्रम का रहा होता, तो हम प्रत्यर्थी की प्रार्थना को एकदम अस्वीकार कर देते । तथापि, उसके द्वारा अभिरक्षा में व्यतीत की गई अवधि की मात्रा और विचारण के शीघ्र ही किसी समय पूर्ण होने की असंभावना को ध्यान में रखते हुए यह प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय के पास जमानत मंजूर करने के सिवाय कोई अन्य विकल्प नहीं बचा था । अपनी पसंद का साक्ष्य प्रस्तुत करके और किसी संदेह के परे आरोपों को सिद्ध करने के अपीलार्थी के अधिकार तथा साथ-ही-साथ हमारे संविधान के भाग 3 के अधीन प्रत्याभूत प्रत्यर्थी के अधिकारों की भली-भांति संरक्षा करने के बीच एक संतुलन बनाने का प्रयत्न किया गया है ।

निष्कर्ष

20. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हम आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने के लिए तैयार नहीं हैं । तथापि, हमारा यह विचार है कि विचारण न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी को छोड़ते हुए अधिरोपित की जाने वाली शर्तों के अतिरिक्त, यह कुछ अतिरिक्त शर्तें अधिरोपित करने से न्याय और बृहत्तर समाज के सर्वोत्तम हित की पूर्ति हो जाएगी कि प्रत्यर्थी प्रत्येक सप्ताह सोमवार को 10.00 बजे पूर्वाह्न में स्थानीय पुलिस थाने में अपनी उपस्थिति दर्ज कराएगा और लिखित में सूचित करेगा कि वह किसी अन्य नए अपराध में अंतर्ग्रस्त नहीं है । प्रत्यर्थी किसी अन्य ऐसे क्रियाकलाप में भाग लेने से भी विरत रहेगा जिससे साम्प्रदायिक भावनाएं भड़क सकती हों । यदि प्रत्यर्थी अपनी जमानत की किसी शर्त का अतिक्रमण करते हुए पाया जाता है या साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ करने का प्रयत्न करता है, या साक्षियों को प्रभावित करता है या किसी अन्य तरीके से विचारण में बाधा डालता है, तब विशेष न्यायालय को तुरंत उसकी जमानत को रद्द करने की स्वतंत्रता होगी । तद्नुसार, यह अपील ऊपर उल्लिखित निदेशों के अध्यधीन रहते हुए खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

जस.